न च मां तानि कर्माणि निबध्नन्ति धनंजय।
उदासीनवदासीनमसक्तं तेषु कर्मसु।।९।।

न =नहीं; **च** =तथा; **माम्** =मुझे; **तानि** =वे सब; **कर्माणि** =कार्य-कलाप; **निबध्नन्ति** =बाँधते; **धनंजय** =हे वैभवविजयी अर्जुन; **उदासीनवत्** =तटस्थ की भाँति; **आसीनम्** = स्थित हूँ; **असक्तम्** =अनासक्तभाव से; **तेषु** =उन; **कर्मसु** =कर्मों में।

अनुवाद

हे धनंजय! यह सब कार्य मेरे लिए बन्धनकारी नहीं हो सकता, क्योंकि मैं इसमें उदासीन के समान अनासक्तभाव से स्थित हूँ।।९।।

तात्पर्य

इस सन्दर्भ में यह नहीं समझना चाहिए कि श्रीभगवान् निष्क्रिय हैं। अपने वैकुण्ठ-जगत् में वे नित्य क्रीड़ारत हैं। ब्रह्मसंहिता में उल्लेख है: 'प्राकृत क्रियाओं से सर्वथा असंग होते हुए भी वे अपनी आनन्दचिन्मयरसात्मिका लीला में नित्य तत्पर हैं।' प्राकृत क्रियाएँ उनकी विविध शक्तियों द्वारा घटती हैं; श्रीभगवान् स्वयं सृष्ट जगत् की संपूर्ण प्राकृत क्रियाओं से नित्य उदासीन रहते हैं। यहाँ उनकी इस उदासीनता का वर्णन है। जड़ प्रकृति पूर्णरूप से उनके आधीन है, फिर भी वे उदासीन के सदृश बैठे हैं। इस सन्दर्भ में न्यायाधीश का दृष्टान्त उल्लेखनीय है। वह स्वयं अपने आसन पर बैठा रहता है, परन्तु उसकी आज्ञा से कितनी ही घटनायें घटित होती हैं—किसी को प्राणदण्ड दिया जाता है, किसी को कारावास तो किसी को विपुल लक्ष्मी; परन्तु इस सबसे वह स्वयं सर्वथा असंग है। उस हानि-लाभ से उसे कोई प्रयोजन नहीं। ऐसे ही, यद्यपि प्रभु का हाथ हर कार्यक्षेत्र में रहता है, फिर भी वे सबसे असंग हैं। 'वेदान्तसूत्र' में उल्लेख है कि वे इस जगत् के द्वन्द्वों से अतीत हैं। इस संसार के सृजन-संहार में भी उनकी आसक्ति नहीं है। जीव पूर्वकर्म के अनुसार नाना योनियों को ग्रहण करते हैं, श्रीभगवान् इसमें हस्तक्षेप नहीं करते।

मयाध्यक्षेण प्रकृतिः सूयते सचराचरम्।
हेतुनानेन कौन्तेय जगद्विपरिवर्तते।।१०।।

मया =मेरी: **अध्यक्षेण** =अध्यक्षता में; **प्रकृतिः** =माया शक्ति; **सूयते** =रचती है; **स** =सहित; **चराचरम्** =चर-अचर; **हेतुना अनेन** =इस कारण से; **कौन्तेय** =हे अर्जुन; **जगत्** =प्राकृत सृष्टि; **विपरिवर्तते** =उत्पत्ति-विनाश के चक्र में क्रियाशील है।

अनुवाद

हे कुन्तीपुत्र! यह अपरा प्रकृति (माया) मेरी अध्यक्षता में कार्य करती हुई सम्पूर्ण चराचर प्राणियों को रचती है। इसी कारण इस जगत् का बारम्बार सृजन और संहार होता है।।१०।।

तात्पर्य

यहाँ स्पष्ट कथन है कि प्राकत-जगत् की सारी क्रियाओं से बिल्कुल असंग होते